Think IAS...

दृष्टि The Vision

Think Drishti

छत्तीसगढ़ लोक सेवा आयोग (CGPSC)

कल्याणकारी, विकासात्मक कार्यक्रम एवं कानून

(छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ सहित)

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

Code: CGM01

छत्तीसगढ़ लोक सेवा आयोग (CGPSC)

कल्याणकारी, विकासात्मक कार्यक्रम एवं कानून

(छत्तीसगढ़ के विशेष संदर्भ सहित)

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiias.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिये निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

CGPCS DLP विषय सूची (Contents)

1. भारतीय समाज, सामाजिक बदलाव के एक साधन के रूप में सामाजिक विधान 7-16

1.1 भारतीय समाज : विशेषताएँ एवं समस्याएँ 7

1.2 सामाजिक विधान : अर्थ एवं प्रकार 11

1.3 सामाजिक विधान द्वारा परिवर्तन 13

1.4 सामाजिक विधान का प्रभाव 14

2. मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 17-43

2.1 प्रारंभिक 21

2.2 राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग 22

2.3 आयोग के कृत्य और शक्तियाँ 25

2.4 प्रक्रिया 28

2.5 राज्य मानव अधिकार आयोग 29

2.6 मानव अधिकार न्यायालय 33

2.7 वित्त, लेखा और संपरीक्षा 34

2.8 प्रकीर्ण 35

3. भारतीय संविधान एवं आपराधिक विधि (दंड प्रक्रिया संहिता) के अंतर्गत महिलाओं को प्राप्त सुरक्षा (सीआरपीसी) 44-60

3.1 महिलाओं के विरुद्ध अपराध 44

3.2 महिलाओं के प्रति अपराध के लिये उत्तरदायी कारण 45

3.3 भारत में महिलाओं हेतु महत्त्वपूर्ण संवैधानिक प्रावधान 47

3.4 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत महिलाओं को प्राप्त सुरक्षा 48

3.5 भारतीय आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत महिलाओं को प्राप्त सुरक्षा 49

3.6 भारत में महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा के लिये कानून एवं विधायन 52

3.7 भारत में महिला अधिकारों की निगरानी के लिये एजेंसियाँ एवं संस्थाएँ 58

4. घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 **61-79**

4.1 प्रारंभिक 61

4.2 घरेलू हिंसा से संरक्षण एवं संबंधित प्रक्रियाएँ 65

4.3 घरेलू हिंसा के कारण एवं परिणाम 74

4.4 महिलाओं के विरुद्ध होने वाली घरेलू हिंसा को रोकने हेतु सुझाव 76

5. सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 **80-90**

5.1 पृष्ठभूमि 80

5.2 विभिन्न निर्योग्यताएँ एवं दंड प्रावधान 81

5.3 न्यायालयीन संदर्भ एवं अधिकारिता 84

6. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 **91-115**

6.1 पृष्ठभूमि एवं प्रारंभिक 91

6.2 अत्याचार के अपराध एवं दंड प्रावधान 94

6.3 निष्कासन एवं शास्ति 100

6.4 विशेष न्यायालय एवं प्रकीर्ण 102

6.5 अनुसूचित जाति और जनजाति (अत्याचार निवारण) नियम, 1995 109

6.6 अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) संशोधन अधिनियम, 2015 111

7. सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 **116-139**

7.1 पृष्ठभूमि 116

7.2 सूचना का अधिकार और लोक प्राधिकारियों की बाध्यताएँ 118

7.3 केंद्रीय सूचना आयोग 124

7.4 राज्य सूचना आयोग 126

7.5 सूचना आयोग की शक्तियाँ और कृत्य 128

7.6 प्रकीर्ण 131

8. पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 **140-149**

8.1 प्रारंभिक 140

8.2 रोकथाम, नियंत्रण और पर्यावरण प्रदूषण में कमी 143

8.3 प्रकीर्ण 146

9. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 **150-176**

9.1 प्रारंभिक 152

9.2 उपभोक्ता संरक्षण परिषद 156

9.3 उपभोक्ता विवाद प्रतितोष अभिकरण 158

9.4 प्रकीर्ण 170

10. सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 **177-218**

10.1 प्रारंभिक 177

10.2 अंकीय चिह्नक और इलेक्ट्रॉनिक चिह्नक 180

10.3 इलेक्ट्रॉनिक नियमन 181

10.4 इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों का अधिकार, अभिस्वीकृति और प्रेषण 183

10.5 प्रमाणकर्ता प्राधिकारियों का विनियमन 185

10.6 शास्तियाँ, प्रतिकर और अधिनिर्णय 192

10.7 साइबर अपील अधिकरण 195

10.8 साइबर अपराध 199

10.9 प्रकीर्ण 208

10.10 सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) अधिनियम, 2008 212

11. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 **219-236**

11.1 प्रारंभिक 219

11.2 विशेष न्यायाधीशों की नियुक्ति 221

11.3 अपराध और शास्तियाँ 222

11.4 अधिनियम के अधीन मामलों का अन्वेषण 226

11.5 अभियोजन के लिये मंजूरी और अन्य प्रकीर्ण उपबंध 227

12. छत्तीसगढ़ के प्रमुख अधिनियम **237-271**

13. छत्तीसगढ़ शासन की प्रमुख कल्याणकारी योजनाएँ **272-286**

अध्याय
1

भारतीय समाज, सामाजिक बदलाव के एक साधन के रूप में सामाजिक विधान (Indian Society, Social Legislation as an Instrument of Social Change)

भारतीय समाज समन्वित सामाजिक संस्कृति का एक अतुलनीय उदाहरण है। यहाँ प्रारंभ से ही विभिन्न विचारों, भाषाओं, खान-पान, रहन-सहन, धार्मिक मान्यताओं आदि की विविधता उपस्थित रही है। भारतीय समाज की विविधता का एक प्रमुख कारक यहाँ उपस्थित भौगोलिक विविधता है। यहाँ एक ओर जहाँ ऊँचे पर्वत, समुद्र तट और मरुस्थल हैं तो वहीं दूसरी ओर वृहद् मैदान और घने जंगल भी हैं। इस कारण भारतीय समाज का विविधतापूर्ण स्वरूप होना स्वाभाविक-सा लगता है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इस भारतीय समाज में एक वर्ग धनी एवं शिक्षित है तो दूसरा निर्धन एवं निरक्षर। एक ओर बड़े-बड़े औद्योगिक घराने हैं तो दूसरी ओर दमन एवं शोषण की शिकार जनता। कहीं महिलाओं को संरक्षण देने के लिये बड़े-बड़े आंदोलन किये जाते हैं तो कहीं कन्या भ्रूणहत्या की निर्मम घटनाएँ होती हैं। कहीं समावेशी विकास को प्रोत्साहित करने पर बल दिया जाता है तो कहीं अनुसूचित जाति/जनजाति समुदाय के अधिकारों का हनन भी होता है।

1.1 भारतीय समाज : विशेषताएँ एवं समस्याएँ *(Indian Society : Features and Problems)*

प्रसंगवश, **19वीं शताब्दी के आरंभ से भारत में हुए सामाजिक सुधार आंदोलनों** की पृष्ठभूमि भी कुछ सीमा तक ऐसे ही उथल-पुथल से युक्त थी। तब विधवा विवाह को अस्वीकार कर दिया जाता था, सती प्रथा को समाज द्वारा स्वीकृति प्राप्त थी, छुआछूत भारतीय समाज को दीमक की तरह खोखला कर रहा था, बाल विवाह का बाहुल्य था, स्त्री शिक्षा को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता था। इन विकट परिस्थितियों में राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, दयानंद सरस्वती, डी.के. कर्वे, स्वामी विवेकानंद, ज्योतिबा फुले, सावित्री बाई फुले, बी.आर. अंबेडकर जैसे बुद्धिजीवियों एवं संवेदनशील लोगों ने तत्कालीन भारतीय समाज को नई दिशा दिखाने में अभूतपूर्व योगदान दिया। इस परिप्रेक्ष्य में **1829 में सती प्रथा निषेध अधिनियम**, **1856 में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम** लागू किये गए। **1891 में सम्मति आयु अधिनियम** पारित किया गया, जिसमें 12 वर्ष से कम आयु की कन्याओं के विवाह पर प्रतिबंध लगा दिया गया। महिलाओं की स्थिति में सुधार से संबंधित निम्नांकित अन्य कदम भी उठाए गए-

- 1903 में **बंबई समाज-सुधार समिति** बनाई गई।
- 1916 में **पुणे** में **भारतीय महिला विश्वविद्यालय** स्थापित किया गया।
- 1926 में **अखिल भारतीय महिला संघ/सम्मेलन** स्थापित किया गया।
- 1929–30 में **शारदा अधिनियम** द्वारा विवाह के लिये कन्या की न्यूनतम आयु 14 वर्ष और युवकों की न्यूनतम आयु 18 वर्ष तय किया गया।
- 1932 में **अखिल भारतीय अस्पृश्यता निवारक संघ** स्थापित कर छुआछूत निषेध को प्राथमिकता दी गई।

यह कहा जा सकता है कि भारतीय समाज में निरंतर बदलाव होते रहे हैं और साथ ही इसकी विविधता भी बनी रही है। इस बदलाव के दौरान भारतीय समाज की संतुलित प्रगति के लिये विविध नियम बनाए गए एवं समाजोत्थान को प्रेरित करने वाले संगठनों की स्थापना की गई। उल्लेखनीय है कि हम 21वीं शताब्दी के दूसरे दशक में जी रहे हैं तो भी भारतीय समाज की सामाजिक संस्कृति पर किसी प्रकार की आँच नहीं आई है। हाँ, यह ज़रूर है कि इस विविधतापूर्ण सामाजिक ढाँचे को बनाए रखने और इसकी निरंतर प्रगति के लिये कुछ संतुलनकारी तत्त्वों यथा सामाजिक विधानों की आवश्यकता

- विधवा पुनर्विवाह की परिपाटी आरंभ हुई एवं समाज में उसकी स्वीकार्यता बढ़ी।
- अस्पृश्यता या छुआछूत जैसी सामाजिक बीमारी पर नियंत्रण हुआ। अनुसूचित जातियों को समान अवसर एवं अधिकार प्राप्त हुए।
- जल, ज़मीन, जंगल पर अधिकार प्राप्त होने के साथ आदिवासियों को कानूनी संरक्षण एवं समान अवसर प्राप्त हो सकें।
- स्त्री शिक्षा का अधिकार मिलने से महिलाएँ सशक्त हुईं। समान राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक अधिकार मिलने से महिला सशक्तीकरण संभव हो सका।
- दहेज़ प्रथा जैसी कुरीतियों के विरुद्ध कानूनी अधिकार मिले।
- नाबालिग बच्चों को उचित संरक्षण प्राप्त होने के साथ ही अकेले पुरुष या स्त्री को बच्चा गोद लेने का अधिकार मिला।
- तलाक या विशेष परिस्थितियों में पति से अलग होने पर भरण-पोषण एवं क्षतिपूर्ति का अधिकार मिला।
- भारतीय समाज में महिलाओं को विवाह, तलाक, उत्तराधिकार, संपत्ति, रोज़गार, मातृत्व सुख के अधिकार प्राप्त हुए।
- श्रमिकों को न्यूनतम पारिश्रमिक, अच्छी कार्य दशाएँ, आनुषंगिक लाभ, महँगाई भत्ते, प्रसूति अवकाश, कार्य के निश्चित घंटे आदि के अधिकार मिले।
- देवदासी एवं वेश्यावृत्ति में संलिप्त महिलाओं को समाज की मुख्यधारा में सम्मिलित होने के अधिकार मिले।
- भिक्षावृत्ति, मद्यपान, नशीले पदार्थों का सेवन आदि से संबंधित कानून बनने से समाज में स्वस्थ वातावरण बना।
- महिलाओं एवं बच्चों के यौन शोषण के विरुद्ध कानूनी संरक्षण एवं सहायता प्राप्त हुई।
- घरेलू हिंसा एवं यौन हिंसा से संरक्षण प्राप्त हुआ।

वर्तमान में हमारे देश में आधुनिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकता के अनुरूप गतिशील सामाजिक विधान बनाने एवं पहले से उपस्थित विधानों के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है। ये विधान ऐसे हों, जो समस्त वर्गों की आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं को पूर्ण करने तथा सामाजिक विषमता दूर करने में समर्थ हों। सामाजिक विधानों से सामाजिक परिवर्तन होने के साथ-साथ वंचन में कमी आई है परंतु इसमें निरंतर सुधार की आवश्यकता बनी हुई है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण तथ्य

- सामाजिक विधान सरकार द्वारा पारित वे कानून हैं, जो सामाजिक बुराइयों को दूर करने, सामाजिक विघटन रोकने, वंचित वर्गों को संरक्षण प्रदान करने एवं समाज में सुधारक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से लाए जाते हैं।
- 1829 में सर्वप्रथम बंगाल में सती प्रथा निषेध अधिनियम लागू किया गया, जिसे बाद में संपूर्ण भारत में विस्तारित कर दिया गया।
- भारतीय समाज की प्रमुख विशेषताओं में विविधता, अध्यात्मवाद, सहिष्णुता आदि शामिल हैं।
- भारत में छुआछूत को समाप्त करने के लिये 1955 में 'सिविल अधिकार संरक्षण कानून' पारित किया गया था।
- सिविल अधिकार संरक्षण कानून भारतीय संविधान के अनुच्छेद-17 से संबंधित है।
- शारदा एक्ट 1929 में पारित हुआ था। इस अधिनियम के तहत लड़कियों के लिये विवाह की आयु 14 वर्ष तथा लड़कों की 18 वर्ष निर्धारित की गई।
- 1932 में 'अखिल भारतीय अस्पृश्यता निवारक संघ' की स्थापना की गई थी, इसके पहले अध्यक्ष प्रसिद्ध उद्योगपति **घनश्यामदास बिड़ला** थे।
- दहेज़ प्रथा को रोकने के लिये 'दहेज़ (प्रतिषेध) अधिनियम, 1961' पारित किया गया।
- बाल श्रम समस्या के समाधान के लिये 1979 में **गुरुपद स्वामी समिति** का गठन किया गया था।
- 'सत्यशोधक समाज' ने दलित वर्ग के उत्थान एवं उन्हें गरिमापूर्ण जीवन देने के पक्ष में आवाज़ उठाई।
- डॉ. बी.आर. अंबेडकर ने महिलाओं, दलितों, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों को समानता का अधिकार दिलाने के लिये गंभीर प्रयत्न किये।

अति लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 30 शब्दों में दीजिये)

1. समाज में कानून द्वारा कैसे परिवर्तन लाया जा सकता है?
2. सामाजिक विधान के उद्देश्य क्या हैं?
3. संयुक्त परिवार क्या है?
4. बाल विवाह निषेध अधिनियम, 1929 को स्पष्ट कीजिये।
5. सामाजिक विधान के प्रकार बताइये।

लघुउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 60 शब्दों में दीजिये)

1. 'सामाजिक विधान भारतीय समाज में हो रहे बदलाव के लिये उत्तरदायी हैं।' स्पष्ट कीजिये।
2. भारतीय समाज की प्रमुख विशेषताएँ बताइये।
3. सामाजिक विधान का अर्थ समझाते हुए उसके क्षेत्रों की चर्चा कीजिये।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न (उत्तर लगभग 100/125/175 शब्दों में दीजिये)

1. वर्तमान में भारतीय समाज की प्रमुख समस्याएँ क्या हैं? संक्षिप्त विवरण दीजिये।
2. विधि के माध्यम से समाज में कैसे परिवर्तन लाया जा सकता है? स्पष्ट कीजिये।
3. सामाजिक विधान के प्रभावों की समीक्षा कीजिये।

नोटः वर्ष 2018 से पूर्व परीक्षा प्रणाली में दीर्घउत्तरीय प्रश्नों के अंतर्गत 100/250/500 शब्द सीमा वाले प्रश्न पूछे जाते रहे हैं, जबकि नवीन परीक्षा प्रणाली के अंतर्गत 100/125/175 शब्दों के प्रश्न पूछे जाएंगे।

अध्याय
2

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 (The Protection of Human Rights Act, 1993)

मानव अधिकार एक अत्यंत प्राचीन संकल्पना है। प्राचीन इतिहास में यूनानी साम्राज्य से लेकर 1215 में ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा जारी किये गए मैग्नाकार्टा में इनके लिये प्रतिबद्धता व्यक्त की जाती रही है। मानवाधिकारों की अवधारणा के मूल में यह बात समझी जाती है कि सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र हैं तथा प्रतिष्ठा एवं अधिकारों के संदर्भ में समान हैं। अत: वे अधिकार जो मानव के धर्म, लिंग, जाति, मूलवंश या राष्ट्रीयता से निरपेक्ष उसके समग्र विकास के लिये अनिवार्य हैं, मानवाधिकार कहलाते हैं।

20वीं सदी में विश्व में दो महायुद्धों के रूप में मानवाधिकारों के उल्लंघन की चरम सीमा देखी गई। इसके फलस्वरूप मानवाधिकार संरक्षण की दिशा में कदम उठाना एक नैतिक अनिवार्यता बन गई। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् बने संयुक्त राष्ट्र संघ ने आधुनिक विश्व में मानवाधिकारों के संरक्षण का कार्य अपने हाथ में लिया। इस क्रम में संयुक्त राष्ट्र संघ के अंतर्गत वर्ष 1946 में 'संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार आयोग' की स्थापना की गई। यह आयोग वर्ष 2006 तक कार्य करता रहा तथा 2006 में इसका स्थान संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार परिषद ने ले लिया।

10 दिसंबर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 'मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा' (Universal Declaration on Human Rights) के रूप में एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया गया। इस घोषणा के माध्यम से मानवाधिकार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहली बार संहिताबद्ध रूप में सामने आए। इस घोषणा में कुल 30 अनुच्छेद हैं। इसी कारण प्रत्येक वर्ष 10 दिसंबर को 'मानव अधिकार दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

मानवाधिकार

- 10 दिसंबर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा मानव अधिकारों की सार्वजनिक घोषणा की गई थी।
- सामाजिक जीवन की वे दशाएँ, जो मानव को समाज एवं कानूनसम्मत (संविधान के अनुरूप) कार्यों को संपादित करने की पूर्ण स्वतंत्रता दें **मानवाधिकार** कहलाती हैं।

7-9 अक्टूबर, 1991 के दौरान पेरिस में 'मानव अधिकारों' के संरक्षण व संवर्द्धन के लिये प्रथम अंतर्राष्ट्रीय कार्यशाला आयोजित की गई, जिसमें कि 'पेरिस सिद्धांत' परिभाषित किये गए। इस सिद्धांत में देशों को एक अधिनियम के तहत मानव अधिकारों के संरक्षण के लिये एक राष्ट्रीय आयोग बनाने की ज़िम्मेदारी दी गई थी। पेरिस सिद्धांतों को संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद द्वारा 1992 में तथा महासभा द्वारा 1993 में अंगीकृत किया गया।

पेरिस सिद्धांतों के प्रति भारत की प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए संसद ने 28 सितंबर, 1993 को मानवाधिकारों के संरक्षण व संवर्द्धन के उद्देश्य हेतु 'मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993' पारित किया तथा इसके प्रावधानों के तहत 'राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग' की स्थापना की।

अधिनियम की धारा-2(1)(घ) के अंतर्गत मानव अधिकारों को जीवन, स्वतंत्रता, समानता और व्यक्ति की गरिमा से संबंधित ऐसे अधिकारों के रूप में परिभाषित किया जाता है जो संविधान द्वारा प्रदत्त किये गए हैं या अंतर्राष्ट्रीय संधियों में उल्लिखित तथा भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय हैं।

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 भारत में मानवाधिकारों की रक्षा हेतु निम्नलिखित प्रणाली की व्यवस्था करता है-

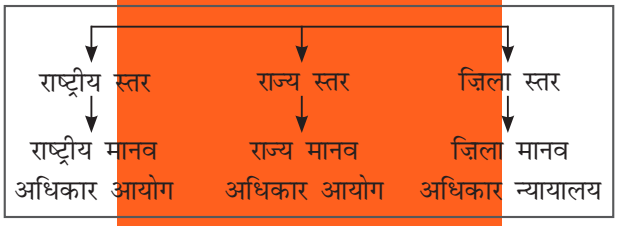

अध्याय
3

भारतीय संविधान एवं आपराधिक विधि (दंड प्रक्रिया संहिता) के अंतर्गत महिलाओं को प्राप्त सुरक्षा (सीआरपीसी)
[Protection Granted to Females (CrPC) under Indian Constitution & Criminal Law (Penal Code)]

स्वतंत्र भारत में महिलाएँ तुलनात्मक रूप से सम्मानजनक स्थिति में हैं। कुछ समस्याएँ जो सदियों से महिलाओं को परेशान कर रही थीं, प्रायः अब नहीं के बराबर दिखाई पड़ती हैं। बाल-विवाह, सती-प्रथा, विधवा पुनर्विवाह पर निषेध, विधवाओं का शोषण, देवदासी-प्रथा, पर्दा-प्रथा आदि कुरीतियाँ अब लगभग समाप्त हो गई हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र में विकास, शिक्षा का सार्वभौमीकरण, सामाजिक और राजनीतिक आंदोलनों, आधुनिकीकरण और इसी तरह के विकास से महिलाओं के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में बदलाव आया है।

इसका मतलब यह नहीं है कि अब महिलाएँ समस्याओं से पूरी तरह से मुक्त हो गई हैं। इसके विपरीत, बदलते परिदृश्यों ने महिलाओं के लिये नई समस्याएँ पैदा की हैं। वे अब नए तनावों और दबावों से घिरी हुई हैं। आज की महिलाओं के विरुद्ध होने वाले प्रमुख अपराधों का विश्लेषण यहाँ नीचे किया गया है।

3.1 महिलाओं के विरुद्ध अपराध *(Crime against Women)*

जब हम महिलाओं के विरुद्ध होने वाले अपराधों की बात करते हैं तो इससे यह स्पष्ट होता है कि कुछ विशेष प्रकार के अपराध सिर्फ महिलाओं के विरुद्ध ही किये जाते हैं। भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code–IPC) के तहत मुख्य तौर पर निम्नलिखित कृत्यों को महिलाओं के विरुद्ध अपराध माना गया है–

(i) बलात्कार (Rape), (ii) अपहरण या भगा ले जाना (Kidnapping or Abduction), (iii) दहेज हत्या, (iv) उत्पीड़न (शारीरिक एवं मानसिक) Harassment (Physically/mentally), (v) छेड़छाड़ (Molestation), (vi) यौन उत्पीड़न (Sexual harassment), (vii) लड़कियाँ मँगवाना या लाना (Import of girls)।

सामाजिक प्रतिरूप राष्ट्रीय संस्थान व राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो के अनुसार हर 33 मिनट में महिलाओं के विरुद्ध एक मामला मिलता है। महिलाओं के विरुद्ध सबसे ज़्यादा अपराध क्रमशः उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, राजस्थान व मध्य प्रदेश में देखने को मिलते हैं।

महिलाओं और लड़कियों को विभिन्न अपराधों का सामना, कन्या भ्रूण हत्या, बाल-विवाह, पारिवारिक व्यभिचार और कथित ऑनर किलिंग आदि के रूप में करना पड़ता है। यह दहेज संबंधी हत्या या घरेलू हिंसा, दुष्कर्म, यौन शोषण, दुर्व्यवहार, दुर्व्यापार, निरादर और निष्कासन के रूप में भी हो सकते हैं। महिलाओं एवं लड़कियों को किसी वस्तु या संपत्ति की तरह खरीदा एवं बेचा जाता है। विवाहेतर संबंधों के अपराध में उन्हें निर्वस्त्र कर एवं उनके सिर मुड़ाकर सार्वजनिक तौर पर घुमाया जाता है। दहेज से संबंधित मामलों में उन्हें ज़िंदा जलाकर मार दिया जाता है। कार्यस्थलों पर उनका शारीरिक एवं मानसिक उत्पीड़न किया जाता है। तेज़ाब से हमला, अश्लील चित्रण, बलात्कार, तस्करी एवं छेड़छाड़ महिलाओं से जुड़ी प्रमुख समस्याएँ हैं।

महिलाओं के साथ होने वाली ऐसी घटनाओं में अक्सर देखा जाता है कि ज़्यादातर महिलाएँ न तो उस समय और न ही घटना के बाद इसका ज़िक्र करती हैं। वे न तो घर में अपने साथ होने वाली हिंसा के बारे में बताती हैं और न पुलिस में उसके खिलाफ शिकायत दर्ज कराती हैं। प्रायः वे समझती हैं कि उनके साथ ऐसा ही होता आया है और इसमें बदलाव नहीं लाया जा सकता है।

अध्याय
4

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 (The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005)

घरेलू हिंसा या महिला एवं पारिवारिक हिंसा रोकथाम अधिनियम, 2005 परिवार के भीतर हिंसा के किसी भी रूप में शिकार होने वाली महिलाओं की रक्षा करने और उन्हें भारतीय संविधान द्वारा प्राप्त अधिकारों की सुरक्षा के लिये अधिनियमित किया गया है। यह अधिनियम **जम्मू-कश्मीर को छोड़कर पूरे देश में लागू है।** 13 सितंबर, 2005 को राष्ट्रपति ने इसे अपनी स्वीकृति प्रदान की तथा 26 अक्टूबर, 2006 से इसे लागू किया गया। इस अधिनियम में 5 अध्याय एवं 37 धाराएँ है।

4.1 प्रारंभिक *(Preliminary)*

अध्याय-1 (प्रारंभिक)

धारा-1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ *(Short title, extent and commencement)*

(1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 है।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत में है।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जिसे केंद्रीय सरकार राजपत्र अधिसूचना द्वारा नियत करे।

सामान्य तौर पर महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा, वैवाहिक जीवन के अंतर्गत उन्हें पहुँचाई गई शारीरिक हानि को माना जाता है। व्यापक संदर्भ में घरेलू हिंसा का संबंध केवल वर्तमान पतियों से ही न होकर पुरुष मित्रों, पूर्व-पतियों या परिवार के अन्य सदस्यों से भी हो सकता है। इस तरह से घरेलू हिंसा पीड़ित (Victim) एवं प्रत्यर्थी (Respondent) के संबंध को दर्शाता है। घरेलू हिंसा का निहित उद्देश्य महिलाओं को पराधीन बनाए रखना होता है। इसके लिये हिंसा के विभिन्न रूपों का सहारा लिया जाता है और शारीरिक, मानसिक, वित्तीय एवं लैंगिक उत्पीड़न किया जाता है।

धारा-2. परिभाषाएँ *(Definitions)*

इस अधिनियम की धारा-2 के तहत प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं-

(क) **व्यथित व्यक्ति** से कोई ऐसी महिला अभिप्रेत है, जो प्रत्यर्थी की घरेलू नातेदारी में है या रही है और जिसका अभिकथन है कि वह प्रत्यर्थी द्वारा किसी घरेलू हिंसा का शिकार रही है;

(ख) **बालक** से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जो अठारह वर्ष से कम आयु का है और जिसके अंतर्गत कोई दत्तक, सौतेला या पोषित बालक है;

(ग) **प्रतिकर आदेश** से धारा-22 के निबंधनों के अनुसार अनुदत्त कोई आदेश अभिप्रेत है;

(घ) **अभिरक्षा आदेश** से धारा-21 के निबंधनों के अनुसार अनुदत्त कोई आदेश अभिप्रेत है;

(ङ) **घरेलू घटना रिपोर्ट** से ऐसी रिपोर्ट अभिप्रेत है, जो किसी व्यथित व्यक्ति से घरेलू हिंसा की किसी शिकायत की प्राप्ति पर विहित प्रारूप में तैयार की गई हो;

(च) **घरेलू नातेदारी** से ऐसे दो व्यक्तियों के बीच नातेदारी अभिप्रेत है, जो साझी गृहस्थी में एक साथ रहते हैं या किसी समय एक साथ रह चुके हैं, जब वे समरक्तता, विवाह द्वारा या विवाह दत्तक ग्रहण की प्रकृति की किसी नातेदारी द्वारा संबंधित हैं या एक अविभक्त कुटुंब के रूप में एक साथ रहने वाले कुटुंब के सदस्य हैं;

(छ) **घरेलू हिंसा** का वही अर्थ है, जो उसका धारा-3 में है;

अध्याय
5

सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 (The Protection of Civil Rights Act, 1955)

स्वतंत्रता एवं समानता सामाजिक न्याय के मूलभूत तत्त्व हैं। दोनों में से किसी एक का अभाव सामाजिक न्याय का अभाव है। स्वतंत्रता व्यक्ति की अंतर्निहित शक्तियों के विकास के लिये ज़रूरी है। किसी भी समाज में समानता सहज और वांछनीय है। समाज के अस्तित्व को बनाए रखने और उसे सतत् विकास की ओर गतिमान बनाए रखने की दृष्टि से विषमताओं को न्यूनतम किया जाना ज़रूरी है, किंतु अधिक विषमता को नियंत्रित करना और समानता की प्राप्ति के लिये प्रयास करना कहीं अधिक अनिवार्य है। एक न्यायपूर्ण व्यवस्था वह है जो समानता पर आधारित हो, किसी भी व्यवस्था में जितनी अधिक विषमता होगी, अन्याय व शोषण की संभावना भी उतनी ही अधिक होगी। समाज में अस्पृश्यता या छुआछूत जैसी बुराई के अंत के लिये सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 प्रवृत्त किया गया है।

5.1 पृष्ठभूमि *(Background)*

अस्पृश्यता के प्रयोग एवं उसे बढ़ावा देने तथा अस्पृश्यता या इससे संबद्ध मामलों के कारण उत्पन्न किसी प्रकार की निर्योग्यता को दंडित करने के उद्देश्य से 1955 में अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम बनाया गया था।

इस अधिनियम के अंतर्गत अस्पृश्यता को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि **'यदि कोई व्यक्ति अस्पृश्यता को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रचारित करता है, इसके किसी भी रूप को बढ़ावा देता है या ऐतिहासिक, दार्शनिक अथवा धार्मिक आधार पर जाति व्यवस्था की किसी परंपरा के आधार पर या किसी अन्य आधार पर किसी भी रूप में अस्पृश्यता के प्रयोग को बढ़ावा देता है तो उस व्यक्ति को अस्पृश्यता के प्रयोग को प्रोत्साहित करने वाला माना जाएगा।**

चूँकि अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 अस्पृश्यता के आधार पर होने वाले भेदभाव को रोकता है। अस्पृश्यता पर आधारित भेदभाव ज़्यादातर उच्च जातियों द्वारा दलित या अनुसूचित जातियों के साथ किया जाता है इसलिये अस्पृश्यता के आधार पर अपराध गठित करने के लिये यह आवश्यक है कि अभियुक्त एवं परिवादी (Accused and complainant) भिन्न सामाजिक समूह के व्यक्ति हों। यदि **अभियुक्त एवं परिवादी समान सामाजिक समूह के व्यक्ति हैं तो अस्पृश्यता से उद्भूत अपराध गठित नहीं माना जाएगा।**

धारा-1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ *(Short title, extent and commencement)*

भारत गणराज्य के छठे वर्ष में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हुआ–

(1) इसे अधिनियम (सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम), 1955 कहा जाता है।

सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955

- यह अधिनियम 1 जून, 1955 से प्रभावी हुआ था।
- राष्ट्रपति द्वारा इस अधिनियम को 8 मई, 1955 को अनुमति प्रदान की गई थी।
- इस अधिनियम का उद्देश्य निम्न जातियों को समाज में सम्मान एवं समानता का अधिकार दिलाना है।
- अप्रैल 1965 में गठित **इलायापेरूमल समिति (Elayaperumal committee)** की अनुशंसाओं के आधार पर 1975 में इसमें व्यापक संशोधन किये गए तथा अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 [Untouchability (Offences) Act, 1955] का नाम बदलकर सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 (Protection of civil right Act, 1955) कर दिया गया था।
- संशोधित अधिनियम 19 नवंबर, 1976 से प्रभावी हुआ।
- यह अधिनियम भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 17** के अस्पृश्यता उन्मूलन संबंधी प्रावधानों के अनुरूप ही है।
- यह अधिनियम अस्पृश्यता संबंधी व्यवहार को समाप्त करने पर केंद्रित है।
- सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 **जम्मू-कश्मीर सहित** देश के सभी भागों में लागू किया गया है।
- सिविल अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 इस संदर्भ में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 से अलग है, जिसे **जम्मू-कश्मीर को छोड़कर** देश के अन्य भागों में लागू किया गया है।

अध्याय
6

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 [The Scheduled Castes and the Scheduled Tribes (Prevention of Atrocities) Act, 1989]

यह अधिनियम अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के विरुद्ध किये गए अपराधों के निवारण के लिये है। अधिनियम ऐसे अपराधों के संबंध में मुकदमा चलाने तथा ऐसे अपराधों से पीड़ित व्यक्तियों के लिये राहत एवं पुनर्वास का प्रावधान करता है। सामान्य बोलचाल की भाषा में यह अधिनियम अत्याचार निवारण (Prevention of Atrocities) या अनुसूचित जाति/जनजाति अधिनियम कहलाता है।

- यह अधिनियम 11 सितंबर, 1989 को अधिनियमित किया गया था।
- इस अधिनियम को 30 जनवरी, 1990 को जम्मू-कश्मीर को छोड़कर संपूर्ण भारत में लागू किया गया।
- अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के तहत किये गए अपराध गैर-ज़मानती (Non bailable), संज्ञेय (Cognizable) तथा अशमनीय (Non-compoundable) हैं।

6.1 पृष्ठभूमि एवं प्रारंभिक *(Background and Preliminary)*

भारतीय समाज को परंपरागत विश्वासों के अंधानुकरण तथा अतार्किक लगाव से मुक्त करना आवश्यक है। इसके लिये 1955 में अस्पृश्यता (अपराध निवारण) अधिनियम लाया गया था, लेकिन इसकी कमियों एवं कमज़ोरियों के कारण सरकार को इस कानूनी तंत्र में व्यापक सुधार करना पड़ा। 1976 से इस अधिनियम का नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम के रूप में पुनर्गठन किया गया। अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार के अनेक उपाय करने के बावजूद उनकी स्थिति दयनीय बनी रही। उन्हें अपमानित एवं उत्पीड़ित किया जाता रहा। उन्होंने जब भी अस्पृश्यता के विरुद्ध अपने अधिकारों का प्रयोग करना चाहा, उन्हें दबाने एवं आतंकित करने का कार्य किया गया। अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का उत्पीड़न रोकने तथा दोषियों पर कार्रवाई करने के लिये विशेष अदालतों के गठन को आवश्यक समझा गया। उत्पीड़न के शिकार लोगों को राहत, पुनर्वास उपलब्ध कराना एक बड़ी चुनौती थी। इसी पृष्ठभूमि में अत्याचार निवारण अधिनियम, 1989 बनाया गया था। **इस अधिनियम का स्पष्ट उद्देश्य** अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति समुदाय को सक्रिय प्रयासों से न्याय दिलाना था, ताकि समाज में वे गरिमा के साथ रह सकें। उन्हें हिंसा या उत्पीड़न का भय न सताए।

अनुसूचित जाति

- अनुसूचित जाति से तात्पर्य ऐसे लोगों से है, जो प्राचीन समय में वर्ण पदानुक्रम व्यवस्था में शामिल नहीं थे।
- यह शब्द पहली बार साइमन कमीशन द्वारा प्रयोग किया गया था।
- भारत शासन अधिनियम, 1935 में भी इसका उल्लेख किया गया था।

अनुसूचित जनजाति

- अनुसूचित जनजाति शब्द का प्रयोग सबसे पहले भारत के संविधान में हुआ है।
- भारत के संविधान में अनुसूचित जनजातियों को परिभाषित नहीं किया गया है।
- अनुच्छेद 366(25) अनुसूचित जनजातियों का संदर्भ उन समुदायों के रूप में करता है, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 342 के अनुसार अनुसूचित किया गया है।
- अनुच्छेद 342 के अनुसार अनुसूचित जनजातियाँ 'वे आदिवासी या आदिवासी समुदाय या उन आदिवासी समुदायों के भाग या समूह हैं, जिन्हें **राष्ट्रपति द्वारा एक सार्वजनिक अधिसूचना** द्वारा इस प्रकार घोषित किया गया है।'

अध्याय
7

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 (Right to Information Act, 2005)

सूचना के अधिकार की मांग **राजस्थान** से प्रारंभ हुई। 1990 के दशक में राज्य में एक जनांदोलन की शुरुआत हुई, जिसमें सामाजिक कार्यकर्त्ता **अरुणा राय** की अगुवाई में, **मज़दूर किसान शक्ति संगठन** (एम.के.एस.एस.) द्वारा भ्रष्टाचार के भांडाफोड़ के लिये 'जनसुनवाई कार्यक्रम' की मांग की गई। वर्ष 1997 में केंद्र सरकार द्वारा **एच.डी. शौरी** की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई, जिसके द्वारा सूचना की स्वतंत्रता का प्रारूप प्रस्तुत किया गया।

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 देश के शासन में पारदर्शिता लाने का एक अचूक प्रयास है। भारत सरकार के कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय के कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग की पहल पर नागरिकों को आर.टी.आई. (राइट टू इंफॉर्मेशन) पोर्टल गेटवे उपलब्ध कराए जाने की व्यवस्था की गई है। यह अधिनियम नागरिकों के अनुरोध पर सरकार द्वारा समय पर मांगी गई सूचना उपलब्ध कराने का विनिश्चय करता है। यह अधिनियम जहाँ एक ओर नागरिकों को सशक्त करता है, वहीं यह भ्रष्टाचार की रोकथाम और लोकतांत्रिक संस्कृति के विकास में भी सहायक भूमिका निभाने का कार्य कर रहा है। इसके अतिरिक्त शासन में पारदर्शिता स्थापित करने तथा जवाबदेहिता विकसित करने में भी यह अधिनियम सक्षम है।

7.1 पृष्ठभूमि *(Background)*

वर्ष 2002 में संसद ने 'सूचना की स्वतंत्रता' विधेयक पारित किया। इसे जनवरी 2003 में राष्ट्रपति की मंज़ूरी मिली, लेकिन इसकी नियमावली बनाने के नाम पर इसे लागू नहीं किया गया। यूपीए सरकार ने न्यूनतम साझा कार्यक्रम में किये गए अपने वायदे, पारदर्शितायुक्त शासन व्यवस्था एवं भ्रष्टाचारमुक्त समाज बनाने के लिये 12 मई, 2005 को सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 संसद में पारित किया, जिसे **15 जून, 2005 को राष्ट्रपति की अनुमति मिली** और अंततः 12 अक्तूबर, 2005 को यह कानून **जम्मू-कश्मीर को छोड़कर पूरे देश में लागू** किया गया। इसी के साथ सूचना की स्वतंत्रता विधेयक, 2002 को निरस्त कर दिया गया। इस अधिनियम में कुल 6 अध्याय एवं 31 धराएँ हैं।

इस कानून के राष्ट्रीय स्तर पर लागू करने से पूर्व 9 राज्यों ने पहले से ही इसे लागू कर रखा था, जिसमें– तमिलनाडु और गोवा ने 1997, राजस्थान एवं कर्नाटक ने 2000, दिल्ली ने 2001, असम एवं महाराष्ट्र ने 2002, मध्य प्रदेश 2003 तथा जम्मू-कश्मीर ने 2004 में इसे लागू किया था।

अध्याय-1 (प्रारंभिक)

धारा-1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ *(Short title, extent and commencement)*

1. इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 है।
2. इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत में है।
3. धारा-4 की उपधारा (1), धारा-5 की उपधारा (1) और उपधारा (2) धारा-12, धारा-13, धारा-15, धारा-16, धारा-24, धारा-27, और धारा-28 के उपबंध तुरंत प्रभावी होंगे और इस अधिनियम के शेष उपबंध इसके अधिनियम के एक सौ बीसवें दिन (120 दिन) प्रवृत्त होंगे।

धारा-2. परिभाषाएँ *(Definitions)*

इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो-

(क) **समुचित सरकार** से आशय एक ऐसे लोक प्राधिकरण से है जो–

अध्याय
8

पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
[The Environment (Protection) Act, 1986]

आज के बदलते परिवेश में यह अनिवार्य हो गया है कि कृत्रिमता और आधुनिकता के बीच हम पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता दें। यदि पर्यावरण असुरक्षित होगा तो प्राकृतिक संतुलन, जैसे– जल-चक्र, खाद्य-शृंखला आदि पर भी दुष्प्रभाव पड़ेगा। इसका दुष्परिणाम अंततः मानव और जीव जगत को ही भुगतना पड़ेगा।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा जून 1972 में प्रथम मानव पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन **स्टॉकहोम** में किया गया ताकि विभिन्न देश इस विषय पर संवेदनशीलता के साथ आगे बढ़ें। भारत ने भी इससे प्रभावित होकर पर्यावरण संरक्षण के लिये पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 पारित किया। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम का मुख्य उद्देश्य वातावरण से हानिकारक रसायनों की अधिकता को नियंत्रित करना व पारिस्थितिकी तंत्र को प्रदूषणमुक्त रखने का प्रयत्न करना है। इस अधिनियम में कुल **4 अध्याय** तथा **26 धाराएँ** हैं। यह अधिनियम पूरे देश में **19 नवंबर, 1986** से लागू किया गया तथा भारत गणराज्य के सैंतीसवें वर्ष (1986) में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित किया गया। इस अधिनियम में कुल 4 अध्याय एवं 26 धाराएँ हैं।

8.1 प्रारंभिक *(Preliminary)*

अध्याय-1 (प्रारंभिक)

धारा-1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ *(Short title, extent and commencement)*

- इस अधिनियम का नाम 'पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986' है।
- यह पूरे भारत में लागू है।
- यह केंद्रीय सरकार द्वारा शासकीय राजपत्र में अधिसूचित किया जाता है। यह अधिनियम उस तारीख को प्रवृत्त होगा जब इस निमित्त तारीख की घोषणा की जाए।

धारा-2. परिभाषाएँ *(Definitions)*

(क) **पर्यावरण** में जल, वायु, मृदा तथा इनके बीच आपसी संबंध तथा मानव जाति, अन्य जीवित जीव-जंतु, पौधे, सूक्ष्म जीव तथा संपत्ति शामिल हैं।

(ख) **पर्यावरणीय प्रदूषक** ऐसे ठोस, तरल या गैसीय पदार्थ हैं जो इस सांद्रता में उपस्थित रहते हैं, जो पर्यावरण के लिये हानिकारक है।

(ग) **पर्यावरणीय प्रदूषण** का तात्पर्य किसी भी पर्यावरणीय प्रदूषक का पर्यावरण में उपस्थित होना है।

(घ) **संचालन** का तात्पर्य किसी भी पदार्थ के विनिर्माण, प्रोसेसिंग, उपचार (शोधन), पैकेजिंग, भंडारण, परिवहन, उपयोग, संग्रह, वितरण, रूपांतरण, बिक्री के लिये पेशकश, हस्तांतरण या इस तरह के पदार्थ के संचालन के संबंध में है।

(ङ) **खतरनाक पदार्थ** का तात्पर्य कोई पदार्थ या विनिर्मित सामग्री जो अपने रासायनिक या भौतिक-रासायनिक विशेषताओं या संचालन के कारण मानव जाति, अन्य जीव-जंतु, पौधों, सूक्ष्म जीवों, संपत्ति या पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने के लिये ज़िम्मेदार है।

(च) **अधिकार रखने वाला** किसी भी कारखाना, परिसर के संबंध में, अर्थात् व्यक्ति जो कारखाने या परिसर के कामकाज पर नियंत्रण रखता है तथा किसी भी पदार्थ के संबंध में वह व्यक्ति जो किसी भी पदार्थ का स्वामित्व रखता है, शामिल है।

(छ) **विहित** का तात्पर्य इस अधिनियम के अंतर्गत विहित नियमों से है।

अध्याय
9

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (Consumer Protection Act, 1986)

उपभोक्ता संरक्षण के विचार की उत्पत्ति का श्रेय संयुक्त राज्य अमेरिका को है। जब 1960 के दशक के प्रारंभ में उपभोक्ता व्यावसायिक कंपनियों के अनुचित व्यावसायिक कार्यों से नाराज़ थे, तो राल्फ नाडर नामक एक युवा वकील ने निर्माताओं एवं व्यापारियों के खिलाफ उपभोक्ताओं के आरोपों का समर्थन किया था। तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति जॉन एफ. केनेडी ने 15 मार्च, 1962 को अमेरिकी संसद में एक घोषणा द्वारा उपभोक्ताओं के चार बुनियादी अधिकार- (1) सुरक्षा का अधिकार; (2) सूचना का अधिकार; (3) चयन का अधिकार; और (4) शिकायत सुने जाने का अधिकार की रक्षा की वकालत की थी। राष्ट्रपति केनेडी के उपभोक्ता अधिकार विधेयक को याद करने और उपभोक्ताओं को जागरूक करने के लिये अब हर वर्ष 15 मार्च को विश्व उपभोक्ता अधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है। 9 अप्रैल, 1985 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने उपभोक्ता संरक्षण के दिशा-निर्देशों के एक सेट को अपनाया। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव ने सदस्य देशों से उपभोक्ता संरक्षण को बढ़ावा देने के लिये नीतिगत बदलाव या कानून के ज़रिये उन दिशा-निर्देशों को अपनाने का आग्रह किया। तब से सभी देशों में उपभोक्ता संरक्षण कानून लागू किए गए हैं। कई देशों, खासकर संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम (ब्रिटेन), फ्राँस, जर्मनी, स्वीडन और नॉर्वे में मज़बूत उपभोक्ता आंदोलन हैं, जो प्रासंगिक विधायी उपायों द्वारा समर्थित हैं।

उपभोक्ता जागरूकता

उपभोक्ता अधिकारों और ज़िम्मेदारियों से संबंधित अनेक मुद्दों पर वर्ष 2005 से देशव्यापी मल्टी-मीडिया जागरूकता अभियान आयोजित किये जा रहे हैं। इस संदर्भ में 'जागो ग्राहक जागो' नारा आज घर-घर में प्रचलित है। उपभोक्ता जागरूकता अभियान श्रव्य एवं दृश्य प्रचार निदेशालय, दूरदर्शन नेटवर्क तथा ऑल इंडिया रेडियो के माध्यम से कार्यान्वित किये जाते हैं।

भारत में अनुचित व्यापार पद्धतियों की रोकथाम और नियंत्रण तथा उपभोक्ताओं के हितों के संरक्षण और प्रोत्साहन के लिये लंबे समय से कानूनी प्रावधान अस्तित्व में रहे हैं लेकिन दर्जन भर से अधिक ऐसे कानून लागू होने के बावजूद उपभोक्ताओं के हित पर्याप्त रूप से संरक्षित नहीं थे। ये कानून खंडित रूप से उपभोक्ताओं का संरक्षण कर पा रहे थे। कानूनों के शीर्षक संक्षिप्त रूप से उसकी प्रकृति और उद्देश्यों का संकेत करते हैं। उदाहरण के लिये, औषधि एवं प्रसाधन सामग्री अधिनियम (ड्रग्स एंड कॉस्मेटिक एक्ट) का उद्देश्य भारत में निर्मित, आयातित, वितरित और बेची जाने वाली दवाओं और सौंदर्य प्रसाधनों की गुणवत्ता सुनिश्चित करना है। दोषपूर्ण वस्तुओं की आपूर्ति, अपूर्ण सेवाओं के प्रावधान, प्रतिबंधात्मक और अनुचित व्यावसायिक गतिविधियाँ, अधिक कीमत वसूलने और खतरनाक वस्तु एवं सेवाओं की पेशकश करने जैसी उपभोक्ताओं की शिकायतों का निवारण करने के लिये कोई आदर्श, एकीकृत एजेंसी नहीं थी, कानूनी प्रावधानों को भी प्रभावी ढंग से लागू नहीं किया गया था। इसके अलावा, ज़्यादातर कानूनों में उपभोक्ताओं को स्वयं उनकी शिकायतों का निवारण करने का अधिकार नहीं मिला।

उपभोक्ता का अधिकार, 1986

भारत के उपभोक्ता आंदालेन के इतिहास में सबसे महत्त्वपूर्ण मील का पत्थर 24 दिसंबर, 1986 को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम पारित होना था। तब से लेकर तीन बार 1991, 1993 और 2002 में इस कानून में संशोधन किया गया है। यह कानून ज़िला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित त्रिस्तरीय न्यायिक मशीनरी के माध्यम से उपभोक्ताओं की शिकायतों के शीघ्र और सस्ते निवारण के ज़रिये उनके हितों को बेहतर ढंग से संरक्षित करना चाहता है।

उपभोक्ता के अधिकार

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के द्वारा संरक्षित एवं प्रोत्साहित किए जाने वाले उपभोक्ताओं के छह अधिकार हैं-

- खतरनाक वस्तुओं एवं सेवाओं के विपणन के खिलाफ संरक्षण का अधिकार;
- वस्तुओं और सेवाओं की गुणवत्ता, मात्रा, क्षमता, शुद्धता, मानक और मूल्य के बारे में सूचना का अधिकार, ताकि अनुचित व्यापार पद्धति से उपभोक्ताओं को बचाया जा सके;
- प्रतिस्पर्द्धी कीमत पर विभिन्न प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं की उपलब्धता;

अध्याय
10

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 (Information Technology Act, 2000)

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 30 जनवरी, 1997 के संकल्प ए./आर.ई.एस./51/162 द्वारा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार विधि से संबंधित संयुक्त राष्ट्र आयोग द्वारा अंगीकार की गई इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य संबंधी आदर्श विधि को अंगीकार कर लिया है। उक्त संकल्प में, अन्य बातों के साथ, यह सिफारिश की गई है कि सभी राज्य, जब वे अपनी विधियों का अधिनियमन या पुनरीक्षण करें, संसूचना और सूचना के भंडारण के कागज़-आधारित तरीकों के अनुकल्पों को लागू होने वाली विधि की एकरूपता की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, उक्त आदर्श विधि पर अनुकूल ध्यान दें। उक्त संकल्प को प्रभावी करना और विश्वसनीय इलेक्ट्रॉनिक अभिलेखों द्वारा सरकारी सेवाएँ दक्षतापूर्वक देने का संवर्द्धन करना आवश्यक समझा गया है। भारत गणराज्य के **इक्यावनवें वर्ष** में संसद द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हुआ।

10.1 प्रारंभिक *(Preliminary)*

अध्याय-1 (प्रारंभिक)

धारा-1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और लागू होना *(Short title, extent, commencement and application)*

(1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम **सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000** है।

(2) इसका विस्तार संपूर्ण भारत पर होगा और इस अधिनियम में जैसा उपबंधित है कि यह किसी व्यक्ति द्वारा भारत के बाहर किये गए किसी अपराध या इसके अधीन उल्लंघन पर भी लागू होता है।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केंद्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, नियत करे और इस अधिनियम के भिन्न-भिन्न उपबंधों के लिये भिन्न-भिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी और किसी ऐसे उपबंध में इस अधिनियम के प्रारंभ के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह उस उपबंध के प्रारंभ के प्रति निर्देश है।

(4) इस अधिनियम की कोई बात, पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट दस्तावेज़ों या संव्यवहारों पर लागू नहीं होगी परंतु केंद्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा पहली अनुसूची का, उसमें प्रविष्टियों को जोड़कर या हटाकर, संशोधन कर सकेगी।

(5) उपधारा (4) के अधीन जारी की गई प्रत्येक अधिसूचना संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी।

धारा-2. परिभाषाएँ *(Definitions)*

(1) इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो-

(क) **अभिगम** से इसके व्याकरणिक रूपभेदों और सजातीय पदों सहित, अभिप्रेत है कंप्यूटर, कंप्यूटर प्रणाली या कंप्यूटर नेटवर्क में प्रवेश प्राप्त करना, उसके तर्कसंगत, अंकगणितीय अथवा स्मृति फलन संसाधनों के द्वारा अनुदेश देना या संसूचना देना;

(ख) **प्रेषिती** से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख प्राप्त करने के लिये प्रवर्तक द्वारा आशयित है किंतु इसके अंतर्गत कोई मध्यवर्ती नहीं है;

(ग) **न्यायनिर्णायक अधिकारी** से धारा-46 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त न्यायनिर्णायक अधिकारी अभिप्रेत है;

(घ) **(इलेक्ट्रॉनिक चिह्नक) लगाना** से, इसके व्याकरणिक रूपभेदों और सजातीय पदों सहित अभिप्रेत है किसी इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख को (इलेक्ट्रॉनिक चिह्नक) द्वारा अधिप्रमाणित करने के प्रयोजन के लिये किसी व्यक्ति द्वारा कोई कार्यपद्धति या प्रक्रिया अंगीकार करना;

(ङ) **समुचित सरकार से**-

(i) संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची 2 में प्रगणित,

अध्याय
11

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988
(The Prevention of Corruption Act, 1988)

भ्रष्टाचार को भारत की एक गंभीर एवं जटिल समस्या के रूप में स्वीकार किया जाता है। यहाँ राजनीतिक भ्रष्टाचार एवं प्रशासनिक भ्रष्टाचार घनिष्ठ रूप से संबद्ध हैं इसलिये भारत में अन्य देशों की तुलना में अधिक गंभीर एवं व्यापक स्तर पर भ्रष्टाचार पाया जाता है। देश के विकास में भ्रष्टाचार बहुत बड़ी बाधा है। लोक-कल्याणकारी राज्य एवं संविधान में उल्लेखित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये भ्रष्टाचार का उन्मूलन अत्यंत आवश्यक है। वर्तमान भारत में भ्रष्टाचार एक सामाजिक मूल्य के रूप में स्वीकृत हो गया है, जहाँ राजनेता, प्रशासनिक अधिकारी, उद्योगपति और अपराधियों की गठजोड़ से ऊपर से नीचे तक चलने वाला भ्रष्टाचार का दुश्चक्र समाज के संसाधनों का दुरुपयोग करता है। जो धन सार्वजनिक कार्य में लगना चाहिये, वह भ्रष्टाचारियों की भेंट चढ़ जाता है। भारत में भ्रष्टाचार का दायरा निरंतर बढ़ता जा रहा है। नित नए सामने आते भ्रष्टाचार के मामले भारतीय लोकतंत्र को भी गंभीर हानि पहुँचा रहे हैं।

भ्रष्टाचार की उपस्थिति किसी भी लोकतंत्र के लिये स्वस्थता का लक्षण नहीं है। वर्तमान समय की अनेक समस्याओं की जड़ भ्रष्टाचार को माना जा सकता है। भ्रष्टाचार केवल नैतिकता पर प्रश्न नहीं है बल्कि भारत जैसे विकासशील देश की आर्थिक उन्नति में सबसे बड़ी बाधा है इसलिये भारतीय लोकतंत्र के सशक्तीकरण, आर्थिक उन्नति, चहुँमुखी विकास एवं लोक-कल्याणकारी शासन की स्थापना के लिये भ्रष्टाचार उन्मूलन की अत्यंत आवश्यकता है।

भ्रष्टाचार अपने स्वरूप में इतना अधिक व्यापक है कि उसकी कोई एक स्पष्ट, सटीक एवं सुनिश्चित परिभाषा देना संभव नहीं है, फिर भी इसे सार्वजनिक धन के व्यक्तिगत लाभ के लिये प्रयोग के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। हालाँकि यह परिभाषा भी पूर्णतः दोषमुक्त नहीं है। सार्वजनिक क्षेत्र में इसे राजनीतिक भ्रष्टाचार व प्रशासनिक भ्रष्टाचार के रूप में विभाजित किया जा सकता है। राजनीतिक भ्रष्टाचार मूलतः नीति निर्माण से जुड़ा है। इसके अंतर्गत नीतियों, कानूनों, नियमों, विनियमों में इस तरह का परिवर्तन लाने की चेष्टा की जाती है कि ये किसी समूह विशेष या व्यक्ति विशेष को अधिक लाभ पहुँचाए। नौकरशाही से जुड़ा हुआ भ्रष्टाचार नीतियों को लागू करने से संबंधित है। रिश्वत, भाई-भतीजावाद, घोटाले, धोखाधड़ी भ्रष्टाचार के सर्वाधिक प्रचलित रूप हैं।

भ्रष्टाचार नैतिकता की विफलता का एक महत्त्वपूर्ण आविर्भाव है। अंग्रेज़ी का 'corrupt' शब्द लैटिन शब्द 'corruptus' से लिया गया है, जिसका अर्थ है– 'तोड़ना या नष्ट करना'। भ्रष्टाचार भ्रष्ट (बिगड़ा हुआ) + आचरण (व्यवहार) से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है ऐसा बिगड़ा हुआ आचरण करना जिसकी अपेक्षा लोक सेवकों से नहीं की जाती। भ्रष्टाचार की परिभाषा भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code) की धारा-161 में दी गई है।

भारत में भ्रष्टाचार संपूर्ण राजनीतिक और प्रशासनिक तंत्र में पूरी तरह जड़ जमा चुका है, जिसे नियंत्रित करने के लिये अब तक बहुत से प्रयास किये गए मगर वह उतने प्रभावी सिद्ध नहीं हुए। इस दिशा में एक रोशनी के रूप में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का अधिनियम संख्यांक 49) को देखा जा सकता है। यह अधिनियम भ्रष्टाचार को नियंत्रित करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण उपबंध करता है। यह भ्रष्टाचार निवारण से संबंधित विधि का समेकन और संशोधन करने के लिये तथा उससे संबंधित विषयों के लिये अधिनियम है। इसे भारत गणराज्य के उनतालीसवें वर्ष में ससंद द्वारा निम्नलिखित रूप में अधिनियमित किया गया है। इस अधिनियम में कुल 5 अध्याय एवं 31 धाराएँ शामिल हैं।

11.1 प्रारंभिक *(Preliminary)*

अध्याय-1 (प्रारंभिक)

धारा-1. संक्षिप्त नाम और विस्तार *(Short title and extent)*

(1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम 'भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988' है।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत में है और यह भारत के बाहर भारत के समस्त नागरिकों पर भी लागू है।

अध्याय
12

छत्तीसगढ़ के प्रमुख अधिनियम (Major Act of Chhattisgarh)

अधिनियम केंद्र में संसद या राज्य में विधानसभा द्वारा पारित किसी विधान को कहते हैं। जब संसद या विधानसभा में किसी विषय को प्रस्तावित करते हैं तो उसे विधेयक या बिल कहते हैं। संसद या विधानसभा की सर्वसम्मति से पास होने के बाद उस बिल या विधेयक को अधिनियम का दर्जा मिल जाता है।

छत्तीसगढ़ में प्रचलित प्रमुख अधिनियम को इस अध्याय के अंतर्गत शामिल किया गया है जिसमें शामिल अधिनियमों की प्रमुख विशेषताएँ दी गई हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य पिछड़ा वर्ग आयोग अधिनियम, 1995 *(Chhattisgarh State Backward Class Commission Act, 1995)*

इस अधिनियम के प्रमुख प्रावधान इस प्रकार हैं-

राज्य शासन द्वारा अन्य पिछड़े वर्गों के हित में संविधान में प्रदत्त प्रावधानों के संरक्षण हेतु छत्तीसगढ़ राज्य पिछड़ा वर्ग आयोग अधिनियम, 1995 की धारा-3 में प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए वर्ष 2005 में आयोग का गठन किया गया परंतु वर्ष 2007 को प्रथम अध्यक्ष की नियुक्ति के साथ यह पूर्ण रूप से अस्तित्व में आ गई। अधिनियम के अनुसार आयोग को धारा-9 व 10 में कृत्यों एवं शक्तियों के आधार पर अग्रलिखित कार्य व दायित्व सौंपे गए।

आयोग के कृत्य

1. (क) पिछड़े वर्गों के सदस्यों को संविधान के अधीन तथा तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन दिये गए संरक्षण के लिये हित प्रहरी आयोग के रूप में कार्य करें।
   (ख) पिछड़े वर्गों के कल्याण के लिये बने कार्यक्रमों के समुचित तथा यथासमय कार्यान्वयन की निगरानी करें तथा राज्य सरकार अथवा किसी अन्य निकाय या प्राधिकरण के कार्यक्रमों के संबंध में, जो ऐसे कार्यक्रमों के लिये ज़िम्मेदार हैं, सुधार हेतु सुझाव दें।
   (ग) लोक सेवाओं तथा शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश के लिये पिछड़े वर्गों के आरक्षण के संबंध में सलाह दें।
   (घ) पदों पर नियुक्तियों के आरक्षण का उपबंध करने के प्रयोजनों के लिये राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर तैयार की गई सूचियों में किसी भी नागरिक को पिछड़ा वर्ग के रूप में सम्मिलित करने की प्रार्थनाओं का परीक्षण करें और ऐसी सूचियों में किसी पिछड़े वर्ग को पात्र न होने पर भी सम्मिलित करने या पात्र होने पर भी सम्मिलित न करने की शिकायतों को सुनें और राज्य सरकार को ऐसी सलाह दें, जैसा कि वह उचित समझे।
   (ङ) पिछड़े वर्ग में संपन्न वर्ग (क्रीमीलेयर) के अंतर्गत आने वाले व्यक्ति या समूह के प्रवर्ग सुनिश्चित करें।
   (च) ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करें, जो राज्य सरकार द्वारा उसे सौंपे जाएँ।
2. आयोग की सलाह साधारणतः राज्य सरकार पर आबद्धकर होगी तथापि जहाँ सरकार सलाह को स्वीकार नहीं करती है, वहाँ वह उसके लिये कारण अभिलिखित करेगी।

आयोग की शक्तियाँ

1. आयोग को अधिनियम की धारा-10 की उपधारा (1) के अधीन अपने कृत्यों का पालन करते समय निम्नलिखित विषयों के बाबत किसी वाद का विचारण करने वाले किसी सिविल न्यायालय की शक्तियाँ प्राप्त होंगी, अर्थात्-
   (क) राज्य के किसी भी भाग से किसी व्यक्ति को समन करना और हाज़िर कराना तथा शपथ पर उसकी परीक्षा करना।
   (ख) किसी दस्तावेज़ को प्रकट करने और पेश करने की अपेक्षा करना।
   (ग) शपथपत्रों पर साक्ष्य ग्रहण करना।

अध्याय
13

छत्तीसगढ़ शासन की प्रमुख कल्याणकारी योजनाएँ
(Major Welfare Schemes of Chhattishgarh Government)

राज्य के समाज कल्याण विभाग के द्वारा जहाँ एक ओर वरिष्ठ नागरिकों को उनके अधिकारों के संरक्षण हेतु नियमों का क्रियान्वयन कराया जाता है वहीं दूसरी ओर जो बच्चे परिस्थितिवश आपराधिक गतिविधियों से जुड़े हैं अथवा जिन्हें देखरेख की अपेक्षा है, उनके पुनर्वास के लिये योजनाएँ संचालित की जा रही हैं। राज्य में समूहों को संरक्षण एवं सुरक्षा प्रदान करना राज्य शासन का उत्तरदायित्व है। समाज कल्याण विभाग अपने सीमित संसाधनों से नि:शक्त व्यक्तियों, वरिष्ठ नागरिकों, विधवा एवं परित्यक्त महिलाओं, निराश्रित व्यक्तियों के लिये योजनाओं का क्रियान्वयन करता है। प्रदेश में नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण एवं पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995, माता-पिता एवं वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण तथा अधिनियम, 2007, राष्ट्रीय न्यास (स्वपरायणता, प्रमस्तिष्क अंगाघात, मानसिक मंदता एवं बहुनि:शक्तता से ग्रसित व्यक्ति कल्याण) अधिनियम, 1999, किशोर न्यास (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) अधिनियम, 2000 के प्रावधानों का क्रियान्वयन सकारात्मक एवं व्यावहारिक रूप में किया जा रहा है। राज्य में नि:शक्त व्यक्तियों की शीघ्र पहचान से लेकर उनके सामाजिक एवं आर्थिक पुनर्वास के लिये योजनाएँ संचालित हैं। वरिष्ठ नागरिकों के दीर्घकालीन अनुभवों तथा उनके द्वारा किये गए उत्कृष्ट कार्यों के प्रति समाज में कृतज्ञता ज्ञापन स्वरूप 1 अक्टूबर को अंतर्राष्ट्रीय वृद्धजन दिवस के अवसर पर ग्राम पंचायत से राज्य स्तर तक वरिष्ठ नागरिकों का सम्मान किया जाता है। माता-पिता एवं वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 के प्रावधानों पर तत्परता से कार्यवाही सुनिश्चित की जा रही है। समाज कल्याण विभाग अपने दायित्वों के अनुरूप राज्य में वंचित एवं पीड़ित वर्ग के लिये कार्य कर रहा है।

छत्तीसगढ़ समाज कल्याण विभाग का दायित्व

छत्तीसगढ़ समाज कल्याण विभाग का दायित्व है, व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना एवं समाज के ऐसे तबकों को लाभान्वित करना जो शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक या किसी अन्य कारणों से परेशानी में हों। विभाग द्वारा ऐसी योजनाएँ संचालित की जा रही हैं, जिनसे वरिष्ठ नागरिकों, नि:शक्तजनों, विधवा एवं परित्यक्त महिलाओं, तृतीय लिंग के व्यक्तियों को सहयोग प्रदान किया जा सके। इन दायित्वों के निर्वहन हेतु विभाग के अंतर्गत विभिन्न अधिनियम प्रभावशील हैं, जिनकी अपेक्षाओं की संप्राप्ति के लिये विभाग अपने सीमित संसाधनों के अनुरूप समाज के अंतिम व्यक्ति तक अधोलिखित सेवाएँ प्रदान कर रहा है-

- नि:शक्त व्यक्तियों को उनकी आवश्यकता, क्षमता व पारिवारिक परिवेश के अनुरूप पुनर्वास सेवाएँ।
- वरिष्ठ नागरिकों को सम्मानपूर्वक जीवन यापन हेतु सहायता तथा तीर्थाटन की व्यवस्था।
- वयोवृद्ध/वरिष्ठ नागरिकों को संस्थागत सेवाएँ।
- विधवा/परित्यक्त महिलाओं की अधिकारिता विकास में सहयोग।
- गरीब परिवारों को उनके कमाऊ मुखिया की मृत्यु पर आर्थिक सहायता प्रदान करना।
- तृतीय लिंग के व्यक्तियों के समग्र पुनर्वास के लिये योजनाओं का संचालन।
- नशामुक्ति के प्रति सकारात्मक वातावरण का निर्माण।
- स्थानीय कला के माध्यम से शासन की योजना का प्रचार-प्रसार।
- जनसामान्य को स्वस्थ जीवन शैली एवं नीरोग जीवन जीने के लिये योग से परिचित कराना तथा प्रतिदिन योगाभ्यास करने हेतु प्रोत्साहित करना।

विभाग के कल्याणकारी कार्यक्रम

- नि:शक्त बच्चों के शिक्षण, प्रशिक्षण, भोजन, वस्त्र, आवास की व्यवस्था के तहत शासकीय विशेष विद्यालयों का संचालन।
- नि:शक्त बच्चों के शिक्षण, प्रशिक्षण एवं पुनर्वास हेतु स्वैच्छिक संस्थाओं को अनुदान।

डी.एल.पी. बुकलेट्स की विशेषताएँ

- आयोग के नवीनतम पैटर्न पर आधारित अध्ययन सामग्री।
- पैराग्राफ, बुलेट फॉर्म, सारणी तथा फ्लोचार्ट का उपयुक्त समावेश।
- विषयवस्तु की सरलता, प्रामाणिकता तथा परीक्षा की दृष्टि से उपयोगिता पर विशेष ध्यान।
- प्रत्येक अध्याय के अंत में विगत वर्षों में पूछे गए एवं संभावित प्रश्नों का समावेश।

Website : www.drishtiIAS.com
E-mail : online@groupdrishti.com

DrishtiIAS

YouTube Drishti IAS

drishtiias

drishtithevisionfoundation

641, First Floor, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009
Phones : 011-47532596, +91-8130392354, 813039235456